खुदी-खुदा

—अनिता खुराना (जयपुर)

दोनों शब्दों के वाह्य रूप को देखने में मात्र मात्रा में ही भेद है लेकिन भावार्थ में अनन्त भेद हैं। एक यदि जड़ है तो दूसरा चेतन, एक मिथ्या दूसरा सत्य। यह तो सर्वमान्य सत्य है कि कुछ न कुछ देकर ही किसी भी वस्तु की प्राप्ति होती है तो खुदा की प्राप्ति के लिए खुदी रूपी मूल्य चुकाना पड़ता है। चूंकि यह सम्बन्ध ही भावात्मक है अतः मूल्य भी भावात्मक (समर्पण) है। खुदी वह जो खुद से सम्बन्धित है, जिसमें अहं का समावेश है लेकिन खुदा के अहं के समक्ष व्यक्ति का अहं तुच्छ होता है अतएव खुदा की बुलन्दियों को हमारी खुदी कभी पहुंच नहीं सकती चूंकि हम स्वयं ही काल या हुकम के वशीभूत हैं अथवा कुदरत के करिश्में कभी आगाह नहीं करते हैं। जैसा कि पांच तत्व और तीनों गुणों का नाश हो जाता है, अतः खुदी का भी महाप्रलय में नाश अवश्यमेव है और जो चीज नाश होती है उसकी पहुंच अखण्ड धाम तक नहीं हो सकती। खुदा की प्राप्ति सम्पूर्ण समर्पित भाव से होती है पूर्णतः समर्पित भाव का अर्थ है कि स्वयं को तुच्छ मानना और खुदा को सब विधि पूर्ण मानना। जैसाकि श्री मुख वाणी में उल्लेख है—

"मारा कह्या काढ़ा कह्या,
और कह्या हौ जुदा।
ऐही मैं खुदी टले,
तब बाकी रह्या खुदा॥"

('खिलवत'—प्र० २)

अर्थात भले ही कितनी कसनी कर लें या सन्यास ले लें लेकिन जब यह खुदी टल जाये तब केवल खुदा ही बाकी रह जाता है।

स्वयं को तुच्छ वही मान सकता है जिसे स्वयं के शारीरिक व ऊपरी मान महत्व की अपेक्षा नहीं होती और धनी के हाल पर अपने हाल को छोड़ देता है। यह शरीर और दुनियां की सब वस्तुयें नाशवान हैं और खुदा या धनी व धाम अखण्ड है, अतः सत को असत भेद नहीं सकता, यही कारण है कि धनी इस मुरदार दुनियां में केवल सुरता या ख्याल लेकर आये जिसे ही हम रूह या आत्मा कह सकते हैं। लेकिन यह बाजीगर का खेल ऐसा है कि इसमें भी सब जीते तक चेतन प्रतीत होती जो कुछ समय पश्चात काल में ग्रसित होकर

Nijanand App

नाश हो जाती हैं जिसे हम आयु कहते हैं। 'यह तो प्रकृति का नियम है' कहकर छोड़ दिया जाता है और अन्तकाल को पहले समझने में संकोच करते हैं चूँकि खुदा का डर हमारे दिल में है ही नहीं। माना कि विज्ञान उन्नति की चरम सीमा पर है लेकिन इन्सान जिस बुद्धि के बल पर इतनी उन्नति या आविष्कार कर रहा है कभी यह भी सोचा कि वह किसकी देन है और और यदि वह हमारी (बुद्धि) नहीं तो उसमें उपजने वाली किसी क्रिया के हम अधिकारी नहीं, बस यही सोचने से खुदी भर जाती है। यदि हमें यही सुध आ जाये कि संसार का सर्वनाश होना ही है तथा अखण्ड धाम और हैं जहां हमारी रूह (आत्मा) को पहुंचना है जिसका रक्षक कोई और है, जीते जी स्वयं के अस्तित्व को समाप्त कर केवल धाम धनी के हुक्म को हर पल स्वीकारना ही खुदी को मिटाना है और खुदा के करीब होना है। कुछ भी मुश्किल नहीं लेकिन सबसे मुश्किल यही है चूँकि यह पांच तत्व का शरीर और उसमें बैठा मन इस खुदी को मिटने ही नहीं देता और यह मस्तिष्क पर सवार होकर खुदा की बुलन्दियों को छूने का असफल प्रयास करता है। माना कि आज बहुत कुदरत कृत्रिम में परिवर्तित हो गई है फिर भी इन्सान खुदा तो नहीं हो गया है।

जब जब वाणी का पठन करती हूं यही समझ में आता है कि स्वामी जी ने जो सर्वमतों के विपरीत यह भाव (अंगना या अर्द्धांग भाव) रखा है उसका मतलब ही यही है कि अपना सब कुछ परित्याग कर धनी के घर की मालकिन होना। जिस प्रकार एक लड़की ब्याह के साथ ही अपने पिता के घर की सब वस्तुओं को छोड़कर पति के घर की अधिकारिणी बन जाती है। उसी भांति यह अंगना भाव या पत्नी का भाव लेने का मतलब यही है कि दुनियां या माया या शरीर के सब सम्बन्धों को पिता के घर का समझकर उन्हें त्याग देना और पति के घर की मालकिन बनना। अब विचार यह करना है कि किसका त्याग और किस पर अधिकार। जिस प्रकार लड़की का पिता के घर वालों के साथ सम्बन्ध विच्छेद तो नहीं होता। हां उसमें औपचारिकता का समावेश हो जाता है और पति के घर में भावात्मक अधिकार और कर्तव्य हो जाता है, उसी प्रकार यदि 'वाणी' से हमें अपनी और धनी के घर की सुध आ गई है तो वहां अपनत्व और अधिकार व अंगना भाव से पूर्ण समर्पण भाव भी पनप जाना चाहिए कि 'धनी मेरे, मैं उनकी और उनकी सब वस्तुओं पर पहला अधिकार मेरा' और यह जो बाजीगर का कबूतर वाला खेल हम देखने आये हैं उसमें अपनापन व मोह, ममता कम होकर औपचारिकता आ जानी चाहिए कि हां ये

Nijanand App

सम्बन्ध निभाने हैं, इनमें डूबना नहीं है (खेल देखना है, खेलना नहीं है–सुरता से) ये जो हमारे शारीरिक गुण व अंग हैं उनका उपयोग भी धनी के लिए करना है। जिस प्रकार एक दुनियावी पत्नी का सब तन मन कार्य पति के घर के चाल चलन के अनुसार होता है, दीन में भी ठीक वही भाव कि जो कुछ मेरा है वह सब तेरा है–मेरी इज्जत तेरी, मेरा तन, मन, धन सब तेरा अर्थात मन उसके चरणों में (इश्क भाव से) तन खुदा की बुलंदियो को तथा धर्म कार्यों में प्रवृत्त तथा धन जो माया में साथ चलता है वह उसी अक्षरातीत की देन है और हम करने वाले कुछ नहीं। लेकिन खेद कि हम इसके विपरीत चलते हैं, यह जानते हुए भी कि हर पल एक कठपुतली की तरह ही नाचते हैं, कब क्या हो जाये कुछ पता नहीं। पर जब भी कुछ भला काम हो जाए तो उसमें खुदी का बोलबाला और जब कुछ बिगड़ जाये या अनचाहा कार्य हो जाए तो हुक्म की कारीगरी। क्या तब हमें अपनी खुदी भूल जाती है। जबकि होना यह चाहिए कि गलत कार्य तो हमारी मंदबुद्धि से हुआ है और अच्छा धनी की मेहर से हुआ है या मालिक का शुक्र है। स्वामी श्री प्राणनाथ जी ने स्वयं अपनी 'वाणी' में प्रत्येक बात को स्पष्ट लिखा है कि किस धनी को रिझाना है और किस तरह दुनियां में जीना है। क्या ब्रह्माण्ड है और कहां हमारा अखण्ड ठिकाना है और किस प्रकार उस तक पहुचना है। 'खिलवत' प्रकरण "मैं खुदी को काढ़े का इलाज" में—

श्री महामति कहे ऐ मोमिनो,
सुनो मेरे वतनीयार।
खसम करावे कुर्बानियां,
आओ मैं मारे की लार॥

श्री महामति ने मोमिनो को सम्बोधित करते हुए कहा है कि मेरे वतनी यारो खसम सिर्फ यही कुर्बानी चाहते हैं कि 'आओ मैं मारे की लार'। मैं को मारते आओ और चलते आओ मेरे पास। यह मैं विस्तृत है और कितनी हमने त्यागी है इसका विचार करने हेतु स्वयं हम ही जिम्मेदार हैं।

Nijanand App